Volume-3, Issue-8, August-2014 • ISSN No 2277 - 8160

Research Paper | Sanksrit

ऋग्वेद कालीन सांस्कृतिक परिवेश
Rugved Kalin Sanskrutik Parivesh

Dr Devesh Kumar Mishra

Assistant Professor & Coardinator Sanskrit :
Uttarakhand Open University Teenpani Bypas Road Haldwani Nanital

ABSTRACT

वैदिक साहित्य में मानव के अभ्युदय, कल्याण की प्राप्ति के कारणभूत शाश्वत सिद्धान्तों की प्राप्ति होती है। वेद की ऋचाओं में तत्कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक, दार्शनिक, राजनीतिक तत्वों का सुन्दर अन्वाख्यान किया गया है। वैदिक संस्कृति पूर्णतया सादा जीवन पर तथा उच्च विचारों पर आश्रित थी। एक सुव्यवस्थित सामाजिक जीवन, उन्नत संस्कृति का परिचायक थी तत्कालीन वैदिक संस्कृति।ऋग्वेद काल में आर्यों का समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, नामक चार वर्णों में विभाजिक था। ऋग्वेद के दसवें मण्डल के पुरुषसूक्त में इस बात का प्रमाण सुरखित है। विराट पुरुष ईश्वर के मुख से ब्राह्मण उत्पन्न हुआ था, इसी प्रकार बाहु से क्षत्रिय जंघे या वक्ष से वैश्य और पैरों से शूद्रों की उत्पत्ति हुई थी। इन्हीं चारों वर्णों से सामाजिक व्यवस्था का संचालन था।

KEYWORDS :

प्रस्तावना

सम्पूर्ण वैदिक साहित्य में मानव जाति के अभ्युदय, कल्याण की प्राप्ति के कारण भूत षाष्वत सिद्धान्तों की प्राप्ति होती है। वेद की ऋचाओं में तत्कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक, दार्षनिक, राजनीतिक तत्वों का सुन्दर अन्वाख्यान किया गया है। वैदिक संस्कृति पूर्णतया सादा जीवन पर तथा उच्च विचारों पर आश्रित थी। एक सुव्यवस्थित सामाजिक जीवन, उन्नत संस्कृति का परिचायक थी तत्कालीन वैदिक संस्कृति। पितृ प्रधान परिवार, पिता की सम्पत्ति का अधिकारी पुत्र अथवा पुत्र के अभाव में पुत्री की उत्तराधिकार होता था। गोद की प्रथा थी, जिसे दत्तक पुत्र कहा जाता था। परिवार षिश्ट, सभ्य और सुसंस्कृत होता था। वृद्ध सेवा, विनय भाव, ईष्वर में अटूट विष्वास था। नारी भी देवी की भाँती पूज्य थी। वस्तुतः पिता की भाँति परिवार में माता का भी महत्वपूर्ण स्थान था, पारिवारिक वातावरण में उसका विषेश योगदान होता था। पिता के अभाव में ज्येश्ठ पुत्र ही उसका उत्तराधिकारी होता था। पति–पत्नी सम्बन्ध भी आदर्ष सूचक थे। पति सेवा स्त्रियों का मौलिक धर्म था। इस प्रकार अनेक बिन्दुओं में विचार करने पर वैदिक युगीन संस्कृति समुन्नत रूप में दिखायी देती है।

वर्णाश्रम व्यवस्था

ऋग्वेद के काल में आर्यों का समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैष्य, षूड, नामक चार वर्णों में विभाजिक था। ऋग्वेद के दसवें मण्डल के पुरूशसूक्त में इस बात का प्रमाण है –

ब्राह्मणोस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः
उरु तदस्य यद्वैष्यः पद्भ्यां षूद्रोऽजायत।।[1]

ब्राह्मण विराट पुरूश ईष्वर के मुख से उत्पन्न हुआ था, इसी प्रकार बाहु से क्षत्रिय जंघे या वक्ष से वैष्य और पैरों से षूद्रों की उत्पत्ति हुई थी। इन्हीं चारों वर्णों से सामाजिक व्यवस्था का संचालन था। वर्णों में परस्पर प्रीति और सौहाई था। ऋग्वेद में जाति प्रथा वस्तुतः विवादित विशय है। ऋग्वेद में आश्रम व्यवस्था विकसित थी। ऋशियों ने चार आश्रमों की व्यवस्था की थी जो मानव जीवन के सर्वाङ्गीण विकास में लाभकारी थी। ब्रह्मचर्य आश्रम की प्रषास्ति ऋग्वेद में प्राप्त होती है। जो विद्यार्थी गुरू के समीप आता था विद्याध्ययन करने वह ब्रह्मचारी कहलाता था। यहाँ विषेश ध्यातव्य है कि उक्त षिक्षा में बालक–बालिका दोनों को ब्रह्मचर्य का पालन करना पड़ता था। ब्रह्मचर्य पालन बिल्कुल अनिवार्य था। ऋग्वेद सबसे प्राचीन है उसी के द्व ारा मंत्रों का संकलन करके अथर्ववेद में भी ऋग्वेद के मत्रों का उल्लेख मिलता है। वस्तुत अथर्ववेद में अन्य वेदों के मंत्रों को लाया गया है। इसी क्रम में ब्रह्मचर्य और ब्रह्ममचारी की प्रषास्ति दृस्टव्य है।

आचार्यो ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारी प्रजापतिः
प्रजापतिर्विराजति विराडिन्द्रो भवेद्वषी।।
ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राश्ट्रं नियच्छति।
आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छते।।
ब्रह्ममचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम
अनड्वान् ब्रह्मचर्येणाष्वो ग्रास जिगीशति।
ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत।
इन्द्रोह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वराभरत।। [2]

चार आश्रमों में गृहस्थाश्रम को सभी प्रकार से षारीरिक, आध्यात्मिक और मानसिक उन्नति का साधन बतलाया गया। इसी में अतिथि सेवा, ऋणमुक्ति, पंचमहायज्ञों का सम्पादन आदि सभी विहित थे। अतः गृहस्थ के लिए यह आश्रम सर्वाधिक उपयोगी सिद्ध है।

विवाह और स्त्रियों की स्थिति

वर और कन्या ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए युवावस्था प्राप्त करने पर विवाह के अधिकारी होते थे। कन्या का पाणिग्रहण कर वर निम्नलिखित वाक्य का उच्चारण करता था –

गृहणामि ते सौभगत्वाय हस्तमया पत्या
जरदश्टिर्यथांसः।।[3]

अर्थात सौभाग्य की प्राप्ति के लिए मैं तुम्हारा हाथ ग्रहण कर रहा हूँ। मुझे ही पति को प्राप्त करके तुम वृद्धावस्था को पहुँचना। वैदिक युग में विवाह अपरिवर्तनीय सम्बन्ध माना गया था। पत्नी के अभाव में पति यज्ञादि कार्यों में प्रवृत्त नहीं हो सकता था। ऋग्वेद में गृहणी को गृहलक्ष्मी माना गया। ऋग्वेद के दषम मण्डल में पति के अभाव में देवर से विवाह करने का वर्णन है।

स्त्री जाति का महत्वपूर्ण स्थान था। महाकवि भवभूति ने उत्तररामचरितम् में कहा है कि स्त्रियों को वेद पढ़ने का अधिकार था। इसका उद्धरण है –

अस्मिन्नगस्त्य प्रमुखा प्रदेषे
भूयांस उद्गीधविदो वसन्ति
तेभ्योधिगन्तुं निगमान्तविद्यां
वाल्मीकिपार्ष्वादित पर्यटामि।।[4]

कतिपय वैदिक स्त्रियाँ तो अत्यधिक सम्मानित हुयी हैं। घोशा, लोपामुद्रा, अपाला आदि स्त्रियाँ भी मंत्रदृश्टा हुई हैं। दार्षनिक जगत में मैत्रयी, गार्गी आदि अप्रतिभ रत्न हैं। डॉ0 ए0सी0 दास के षब्दों में –

The Ancient Aryans never Looked upon women as the cause of human downfall.

इस तथ्य के अनेक प्रमाण हैं कि स्त्रियाँ वैदिक युग में सभी क्षेत्रों में आदरणीय और समुन्नत रखी हैं।

राजा और राश्ट्रियता

राज्य प्रबन्धन के लिए वैदिककाल में राजा का निर्वाचन होता था। राश्ट्र का वही सर्वेसर्वा होता था। ऋग्वेद में राजा, राज षब्द अनेकषः प्रयुक्त है। ऐतरेय ब्राह्मण में लिखा है कि देवासुर संग्राम में देवताओं की पराजय हुयी असुर विजयी हुए। उस समय देवताओं ने कहा कि हमारी पराजय का मुख्य कारण राजा का अभाव है। अतः हमें राजा का चुनाव करना चाहिए उदाहरण के लिए –

त्वां वृशो वृणतां राज्याय त्वामिमाः प्रदिषः पञ्चदेवी
वर्शमन् राश्ट्रस्य ककुदि श्रयस्व ततो न उग्रो विभाजा वसूनि।।[5]

प्रजापालन, सैन्य संगठन आदि प्रमुख कार्य राजा ही करता था जो उसकी षासन व्यवस्था का अंग हो। राश्ट्र तथा मातृभूमि के प्रति ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर श्रद्धा प्रकट की गयी है। स्वराज्य रक्षार्थ प्रार्थनाएँ भी हैं। समस्त विष्व एक राश्ट्र है, ऐसी कल्पना ऋग्वेद में की गयी है। यथा –

इहैवैधि माप च्योश्ठाः पर्वत इवाचलिः।
इन्द्र इहैव ध्रुवस्तिश्ठेह राश्ट्रमुधारय। [6]

राश्ट्र का राजा प्रजाजनों को प्रिय होना चाहिए। षासन में भ्रश्टाचार न हो। राजा पर्वत के समान स्थिर होती राश्ट्र को धारण करे। इन्द्र निष्चित होकर राश्ट्र का उद्ध ार करे।

इसके अतिरिक्त वैदिककाल में मृत्यु और पुनर्जन्म के उल्लेख मिलते हैं। इसका तात्पर्य है कि वैदिककालीन समाज से ही मृत्यु एवं पुनर्जन्म की संकल्पनाएँ, मान्यताएँ चली आ रही हैं। मृत्यु के बाद जीवों का नियमन यम करते हैं। जिस मार्ग से उसके पूर्वज गये थे उसी मार्ग से जीवों को यम ले जाते हैं। निम्नमंत्र प्रमाण देते हैं –

प्रेहि प्रेहि पथिभिःपूर्वोभियत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुः।
उभा राजाना स्वधया मदन्ताम् य पष्यासि वरूणं च देवम्।। [7]

पुनः जन्म होता है इसी को पुनर्जन्म का सिद्धान्त कहा जाता है। इसकी पुष्टि भी ऋग्वेद में ही निम्नलिखित मंत्र के द्वारा हो जाती है –

असुनीते पुनदस्यामु चक्षुः पुनः
प्राणमिह नो धेहि भोगम्।
ज्योक् पष्येम सूर्यमुच्चदन्तमनुमते
मृलया न स्वस्ति।। [8]

अर्थात परमेष्वर प्राणों के प्रतिश्ठित करता है। चक्षुरादि इन्द्रियों को प्राणादि भोगों को धारण करता है। हम आपकी कृपा से उदित हुए सूर्य को भी चिरकाल तक अध्ययन करते रहें। आप हमारा कल्याण करें।

निश्कर्श

वस्तुतः वैदिक युगीन सांस्कृतिक अध्ययन अत्यन्त विस्तृत है। उक्त पत्र में संक्षेपतः उपलब्ध कतिपय विशयों का अध्ययन ही प्रस्तुत किया गया है। मुख्य रूप से वैदिककाल की वर्णश्रम व्यस्था ही समाज के संचालन के केन्द्र में थी। राजा भी वर्णाश्रम के विपरीत नियमों का पालन नहीं करता था। राजा की स्थिति आज के परिवेष जैसी नहीं थी। वह धर्मप्रिय, न्यायप्रिय, रागरहित होता था। राश्ट्रियता की रक्षा के लिए कतिबद्ध होता था। विवाह स्थिर और अपरिवर्तनीय सम्बन्ध था। कोई भी पति पूर्ण ईमानदारी से विवाह की स्थिति का निर्वहन करता था। परिवार का मुखिया पिता होता था, उसके अभाव में ज्येश्ठ पुत्र उसका उत्तराधिकारी होता था आदित्यादि। तात्पर्य यह है कि आधुनिक समाज समूह अथवा पारिवारिकता में रहने को प्रतिबद्धता कहता है और स्वीकार नहीं करना चाहता। निजी सम्बन्धों में जटिलता का आभास हो रहा है। मैत्री विस्तार का समाज हो रहा है। वैवाहिक जीवन के निर्वाह में कठोरता नहीं बरती जा रही है। अतः आज के परिप्रेक्ष्य से षान्तिपूर्ण वातावरण वैदिककालीन संस्कृति का रहा होगा। यदि यह कहें कि वर्ण व्यवस्था के अपवादों को छोड़कर वैदिक काल भी संस्कृति सर्वोत्तम थी तो कोई अत्युक्ति न होगी।

REFERENCES

1.ऋग्वेद 10/90/12 | 2.अथर्ववेद 11/5/16–19 | 3.ऋग्वेद में द्रष्टव्य | 4. महाकवि भवभूति – उत्तररामचरितम 2/3 | 5. अथर्ववेद 3/4/2 | 6.ऋग्वेद 10/173/2 | 7.ऋग्वेद 10/14/7 | 8.ऋग्वेद 10/59/6 |